International Journal of Trend in Scientific Research and Development (IJTSRD)
Volume 5 Issue 1, November-December 2020 Available Online: www.ijtsrd.com e-ISSN: 2456 – 6470

वाद्यों का जन्म

डॉ. अंजू रानी शर्मा

एसोसिएट प्रोफेसर, संगीत गायन, राजकीय महाविद्यालय, सफीदों (जींद)

प्राक्कथन

कलात्मक सौंदर्य को ध्यान में रखते हुए मानवीय अभिव्यक्ति तथा अनुभूति को और अधिक सूक्ष्म एवं उत्कृष्ट बनाने की दृष्टि से वाद्यों का विशेष महत्व माना गया है, जैसे स्थूल रूप ढोल या ड्रम की ध्वनि यदि हृदय में दहला देने वाले भावों को जन्म देती है तो बांसुरी या शंख की ध्वनि सहज ही मानव हृदय को प्रेम भक्ति अथवा श्रृंगात्मक भावों की ओर प्रेरित करती है। संगीत धारा में विद्वानों ने एक ओर वाद्यों के माध्यम से संगीत के अनेकोनेक प्रयोजनों को सिद्ध करने का प्रयत्न किया तो दूसरी ओर लोक संस्कृति की धारा में प्राकृतिक उपादानों के प्रयोग का लाभ उठाते हुए नवीन वाद्यों का जन्म होता चला गया। ऐतिहासिक श्रृंखला में वैदिक काल से लेकर आज तक के सभी ग्रंथों में संकलित सामग्री से यह स्पष्ट हो जाता है की काल के दीर्घ अंतराल में असंख्य वाद्यों का जन्म हुआ और समय-समय पर संगीत के विद्वानों द्वारा, शास्त्रकारो द्वारा उनका अवलोकन, अन्वेषण एवं विवेचन करते हुए उनके वर्गीकरण की व्यवस्था के अंतर्गत उन्हें तत, सुषिर, अवनद्य, व घन वाद्यों के रूप में वर्गीकृत किया। वाद्यों के वर्गीकरण के विवेचन से पूर्व वाद्यों की उत्पत्ति के संदर्भ में प्राप्त विचारों पर आधारित विश्लेषण की प्रस्तुति करना अति उपयुक्त प्रतीत होता है।

How to cite this paper: Dr. Anju Rani Sharma "Birth of Musical Instruments" Published in International Journal of Trend in Scientific Research and Development (ijtsrd), ISSN: 2456-6470, Volume-5 | Issue-1, December 2020, pp.1740-1742, URL: www.ijtsrd.com/papers/ijtsrd38209.pdf

IJTSRD38209

Copyright © 2020 by author (s) and International Journal of Trend in Scientific Research and Development Journal. This is an Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution License (CC BY 4.0) (http://creativecommons.org/licenses/by/4.0)

वाद्यों की उत्पत्ति:

वाद्यों का शाब्दिक अर्थ - वह यंत्र जो बजाया जा सके। इसकी उत्पत्ति "वद" धातु से हुई है[1] अर्थात जो बोले वही वाद्य है। संगीत के संदर्भ में इस आशय के आधार पर कहा जा सकता है कि जिस यंत्र से संगीत उपयोगी ध्वनि उत्पन्न की जा सके उसे वाद्य कहते हैं। वह वाद्य या वह वस्तु जिस पर चारों ओर से आघात किया जाए या जिस वस्तु को हाथ से, डंडी से, कोण आदि से आघात करके बजाया जा सके या पवन के सहयोग से तरंगित किया जा सके वही वाद्य है।[2] पौराणिक मान्यताओं के अनुसार तत् वाद्यों को देवताओं से, सुषिर वाद्यों को गंधर्वों से, अवनद्य वाद्यों को राक्षसों से तथा घन वाद्यों को किन्नरों से संबंधित माना गया है। कुछ विद्वानों के अनुसार सभी वाद्यों का उद्गम श्री कृष्ण जी के द्वारा द्वापर युग में स्वीकार किया गया है।[3] ऐसा भी कहा जाता है कि पृथ्वी पर पाए जाने वाले अति प्राचीन कल्पवृक्ष जिन में एक तूयांग नामक वृक्ष था। इसी कल्पवृक्ष से इन चारों प्रकार के वाद्यों की उत्पत्ति हुई है।[4] इसी के साथ यह मत भी प्रचलित है कि दक्ष के यज्ञ से अति क्रोधित शिव को शांत करने के लिए स्वाति और नारद ऋषि के द्वारा इन वाद्यों का आविष्कार हुआ।[5] पौराणिक मान्यताओं के अनुसार विभिन्न वाद्यों की उत्पत्ति का संबंध विभिन्न देवी देवताओं के साथ जोड़ना भारतीय संस्कृति के आध्यात्मिक पक्ष को उजागर करता है परंतु वाद्यों की ऐतिहासिक सुदृढ़ता की दृष्टि से जो तथ्य विशेष महत्व रखते हैं उनमें ऋग्वेद काल से लेकर अनेकों उपनिषदों, शिक्षा ग्रंथों, महाकाव्यों, पुराण एवं तंत्र ग्रंथों के पश्चात भरतनाट्य शास्त्र और उसके बाद अनेकोनेक शताब्दियों में विभिन्न वाद्यों की निर्मिती और उनके

माध्यम से किए गए अनेकोंनेक संगीतात्मक अनुसंधान, शोधात्मक प्रयोग इनके विवेचन तथा विश्लेषण के संबंध में किए गए अनेकों प्रयोग भारतीय संगीत में संगीत वाद्यों के महत्व को अत्यंत सुदृढ़ता प्रदान करते हैं। प्रोफेसर देवव्रत चौधरी के अनुसार - भारतीय संस्कृति एवं समाज का प्रत्येक पक्ष धर्म तथा दर्शन से अनुप्राणित है, इसलिए सभी भारतीय वाद्यों की उत्पत्ति का वर्णन किसी न किसी देवी या देवता से संबंधित मानते हैं।(6) उनके अनुसार आधुनिक विद्वानों की यह राय है की सभ्यता के क्रमशः विकास के साथ-साथ ही वाद्यों का विकास हुआ है। वस्तुतः निश्चित रूप से वाद्यों के विषय में कुछ भी कहना कठिन है। वाद्यों के क्रमिक विकास की परिकल्पना भी अत्यंत सरल है। संगीत में नाद और काल के नियम की प्रक्रिया प्रमुख है। स्वरों की उत्पत्ति नाद को विभाजित करने और आंदोलन संख्या को निश्चित करने से हुई और लय का आविष्कार समय का मात्राओं में विभाजन करने से हुआ। मनुष्य ने ताल की रचना दो वस्तुओं के टकराव से मानी। ध्वनि के स्थूल रूप से और संतुष्ट होने पर मानव ने अधिक गूंज उत्पन्न करने वाले दो धातुओं के आपसी टकराव का ध्वनि से अन्य ताल वाद्यों का निर्माण किया: जैसे घंटा, करताल, मंजीरा, घुंघरू, चिमटा आदि। प्रारंभिक वाद्यों पर लघु तालों का ही वादन किया जाता रहा होगा जैसे कहरवा और दादरा। कालांतर में यह लोक वाद्य अपनी चरम अवस्था पर पहुंच गए। तत् वाद्यों का प्रयोग भारत में अत्यंत प्राचीन है और संभवत धनुष की टंकार ने ही ऐसे वाद्यों के निर्माण के लिए लोगों को प्रेरित किया होगा जो मरे हुए पशुओं की आंते और तुम्बी, लौकी आदि वनस्पतियों को किसी गोल पदार्थ में फंसा कर बांस पर बांधी तांत से रगड़कर बजाई जाती हो। इसी क्रम में इक तारा और उसके बाद दो तारा, चौतारा, सारंगी, वीणा सितार आदि वाद्य विकसित हुए। ऐसी संभावना को भी नकारा नहीं जा सकता। भरत के नाट्य शास्त्र के अनुसार मृदंग की रचना पत्तों पर गिरने वाले जल बिंदुओं के आधार पर हुई। इसी प्रकार धीरे-धीरे मनुष्य ने स्वयं के द्वारा बनाए गए बर्तनों पर मृत पशुओं की खाल चढ़ाकर बजाना शुरू किया होगा। पहले मटका, फिर ढोलक, फिर ढोल, फिर नगाड़ा और डफ आदि चर्म वाद्यों का इसी प्रकार शायद आविष्कार हुआ होगा। सुषिर वाद्यों का विकास बांस के वृक्षों के छिद्रों में से गुजरने वाली वायु की ध्वनि से हुआ होगा। जिसके आधार पर वंशी या वेणु का निर्माण हुआ। उसके उपरांत अलगोजा, बिन ,शहनाई की रचना हुई। वाद्यों का मूल जन्म प्रकृति पदार्थ में ही निहित है। मिट्टी, वनस्पति ,चर्म ,लकड़ी आदि से आरंभिक वाद्य बने और बाद में वर्तमान काल में वैज्ञानिक प्रगति के कारण मनुष्य की कलात्मक अभिरुचि के कारण वाद्यों की बनावट के सौन्दर्य में वृद्धि हुई।

वाद्यों के उपकरण:

सभी प्रकार के वाद्यों के लिए तीन प्रकार के उपकरण ही प्रयोग में लाए जाते हैं। मूल ढांचा, कंपित पदार्थ और प्रेरक पदार्थ। मूल ढांचा प्रकृति द्वारा प्रदत वस्तुओं से निर्मित होता है। जिस प्रकार बांसुरी को ले तो ज्ञात होता है कि प्राचीन समय में मिट्टी, हड्डी आदि से उसका मूल ढांचा बनाया होगा। समय के साथ-साथ बांस का प्रयोग होने लगा और फिर लकड़ी, उसके बाद पीतल, लोहा, चांदी आदि धातुओं में भी बांसुरी का निर्माण किया गया। इसी प्रकार तत वाद्यों में लकड़ी, तुम्बी, कांसे आदि का प्रयोग किया जाता होगा। धन वाद्यों में पीतल, लोहा और अनेक उपकरण मूल ढांचे के निर्माण में प्रयोग में लिए जाते होंगे। कंपित पदार्थ को मूल ढांचे में स्वरों की उत्पत्ति के लिए लगाया जाता होगा। जैसे सारंगी के तार कंपित पदार्थ हैं और ढोलक में चमड़ा। प्राचीन काल में कंपित पदार्थ रूपी उपकरण के लिए गुंज के तार प्रयोग किए जाते थे। समय के साथ-साथ बालों और चमड़े की तारों का भी प्रयोग होने लगा ।वर्तमान काल में फौलाद, पीतल और तांबे की तारों का प्रचलन हो गया है। तीसरे प्रकार उपकरण में प्रेरक पदार्थ के माध्यम से बजाएं जाने वाले वाद्य होते हैं जैसे: सारंगी के लिए गज और नगाड़े के लिए शंकु आदि प्रेरक पदार्थ हैं। मंजीरा और करताल में वादक के दोनों हिस्से एक दूसरे के लिए प्रेरक पदार्थ हैं। जबकि फूंक वाद्यों में वायु प्रेरक पदार्थ है।

वाद्य के प्रयोग:

वाद्य के प्रयोग को हम तीन पक्षों में बांट सकते हैं। प्रतीक पक्ष, शास्त्रीय पक्ष, लोक पक्ष।

प्रतीक पक्ष: जब किसी वाद्य का किसी विशेष प्रयोजन से प्रतीकात्मक संबंध हो। यह पक्ष सभी सभ्य तथा असभ्य जातियों में पाया जाता है- जैसे पूजा-अर्चना के समय घंटी, घंटा ,शंख जैसे विशेष वीडियो का प्रयोग हो जाता है और इसकी ध्वनि मात्र से ही पता चल जाता है, की पूजा हो रही है। इसी प्रकार मांगलिक कार्यों की सूचना हमें शहनाई, ताशा, ढोल आदि वाद्यों के माध्यम से मिल जाती है। उसी प्रकार दुंदुभी, रणभेरी आदि वाद्य युद्ध की स्थिति

का संकेत देते हैं। भावार्थ यह है कि वाद्य अपने प्रतीक पक्ष में एक विशेष संकेत प्रदान करते हैं।

शास्त्रीय पक्ष: शास्त्रीय पक्ष की दृष्टि से वाद्यों का प्रयोग स्वरों की उत्पत्ति, स्वर स्थान की स्थिति, तालों की लयबद्धता और अनेक कार्यों की संपन्नता के लिए किया जाता है।

लोक पक्ष: लोक पक्ष में गायन वादन और नृत्य तीनों कलाओं का उन्मुक्त प्रदर्शन होता है। इस प्रकार हम कह सकते है कि गायन वादन तथा नृत्य इन तीनों कलाओं के प्रयोग विस्तार और सूक्ष्मता के संदर्भ में वाद्यों का बहुत अधिक महत्व माना जाता है। संगीत शास्त्री का विवेचन, विश्लेषण करने की दृष्टि से तो वाद्यों का महत्व स्वीकार्य है ही।

तत् वाद्य: जो तारों पर हाथ से या किसी धातु या किसी लकड़ी या किसी प्लास्टिक के टुकड़े से प्रहार करके बजाए जाते हैं। जिससे तार आंदोलन होते हैं। इन्हीं आंदोलन से मुखरित होने वाली ध्वनि से युक्त होने के कारण इन्हें तत् वाद्य कहा गया है। जैसे स्वर, तानपूरा, रूद्र वीणा, सरोद वीणा, विचित्र वीणा तथा सितार आदि।

सुषिर वाद्य: जिन वीडियो को वायु के प्रवेश से बजाया जाए वह सुषिर वाद्य होते हैं जैसे तुरही, शंख, वंशी जैसे और पाश्चात्य वाद्य जैसे ट्रंपेट, सैक्सोफोन, क्लार्नेट, हारमोनियम आदि जैसे वाद्य सुषिर वाद्य हैं।

अवनद्य वाद्य: चमड़े से मढ़े हुए वाद्यों को अवनद्य वाद्य कहते हैं जैसे: दुंदुभी, मृदंग, पखावज, तबला, ढोलक ढोल, नगाड़ा, डफली आदि। यह भीतर से खोखले होते हैं। इन्हें हाथ से या किसी अन्य वस्तु से थाप देकर बजाया जाता है।

घन वाद्य: जिनमे स्वरों की उत्पत्ति लकड़ी या अन्य निर्मित धातु के प्रहार से होती है उन्हें घन वाद्य कहते हैं। पंडित अहोबल द्वारा रचित "संगीत परिजात" (1650) में जल तरंग नमक घन वाद्य का परिचय मिलता है परंतु आधुनिक समय में घन वाद्यों में जल तरंग, काष्ट तरंग, शीश तरंग, घुंघरू तरंग आदि का कहीं उल्लेख नहीं मिलता। घन वाद्यों में झांझ, मंजीरा, करताल, घंटा, विजय घंटा ,बड़ी झांझ आदि या झुनझुना, रंभा अर्थात वे सभी वाद्य जिनके अंदर कंकड़ या घुंघरू डालकर भी बजाया जा सके। वे सभी घन वाद्य हैं।

भरत ने उपरोक्त वर्गीकरण को पांच वर्गों में विभाजित किया है नखज, चर्म, लौहज, और शरीराज। इन्हें "पंच वाद्यानी" भी कहा गया है। इन पांच ध्वनियों को प्राकृतिक अथवा ईश्वर के द्वारा दी गई माना गया है। जबकि शेष प्रकार की चारों ध्वनियां मानव के द्वारा बनाए गए वाद्यों से उत्पन्न होती है।(7)

आभार पुस्तक सूची:

[1] संगीत, जनवरी - फरवरी अंक 1975, वाद्य वादन, पृष्ठ संख्या 36

[2] श्री राम स्वरूप शास्त्री - आदर्श हिंदी संस्कृत कोष, पृष्ठ संख्या 508

[3] श्री शुभंकर भट्ट, संगीत दामोदर, पृष्ट संख्या - 33

[4] जामवुद्दीवपणणति नमक जैन ग्रंथ

[5] संगीत रत्नाकर, कलानिधि, पृष्ट संख्या, 6-18

[6] प्रो. देवव्रत चौधरी, सितार और उसकी तकनीक, पृष्ट संख्या - 9

[7] डॉ. लालमणि मिश्र, भारतीय संगीत वाद्यों का विकास